लघु और कुटीर उद्योग : वर्तमान और भविष्य

–नितिन प्रधान

ग्रामीण भारत में रोजगार के ऐसे अवसर उपलब्ध हों जिनसे कृषि पर निर्भरता कम हो। इसलिए जहां पूंजी का अभाव है और श्रमबल अधिक है वहां लघु एवं कुटीर उद्योगों को विकसित किए बिना बहुसंख्यक ग्रामीणों की आर्थिक समस्याओं का निराकरण नहीं किया जा सकता। लघु एवं कुटीर उद्योगों में कम पूंजी के विनिवेश से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है और साथ ही अधिकाधिक संख्या में रोजगार के साधन उपलब्ध कराए जा सकते हैं। लघु एवं कुटीर उद्योग आर्थिक शक्ति के केंद्रीकरण को कम करके आय एवं संपत्ति की असमानताओं को कम करने में भी अहम भूमिका निभाते हैं।

इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि आज़ादी के सत्तर वर्ष बीत जाने के बाद भी वास्तविक भारत आज भी गांवों में ही बसता है। भारत की दो तिहाई आबादी गांवों में रहती है। इसलिए देश की अर्थव्यवस्था का विकास भी गांवों के विकास पर ही निर्भर करता है। लेकिन ग्रामीण भारत का विकास आज की तारीख में भी पूरी तरह खेती की स्थिति पर ही निर्भर है। और हिंदुस्तान में खेती के लिए किसान मानसून की स्थिति पर निर्भर रहता है। यही वजह है कि जिस वर्ष मानसून की मेहरबानी न रहे वह साल न केवल ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए मुश्किल होता है बल्कि देश की आर्थिक व्यवस्था भी चरमरा जाती है। ऐसा इसलिए भी है क्योंकि इस दो तिहाई आबादी का ही मूल रूप से खेती–किसानी के काम में जुटा है। शेष आबादी पूरी तरह से उसकी मेहनत पर निर्भर है।

इस स्थिति को पलटने के लिए आवश्यक है कि ग्रामीण भारत में रोजगार के ऐसे अवसर उपलब्ध हों जिनसे कृषि पर निर्भरता कम हो। इसलिए जहां पूंजी का अभाव है और श्रमबल अधिक है वहां लघु एवं कुटीर उद्योगों को विकसित किए बिना बहुसंख्यक ग्रामीणों की आर्थिक समस्याओं का निराकरण नहीं किया जा सकता। लघु एवं कुटीर उद्योगों में कम पूंजी के विनिवेश से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है और साथ ही अधिकाधिक संख्या में रोजगार के साधन उपलब्ध कराए जा सकते हैं। लघु एवं कुटीर उद्योग आर्थिक शक्ति के केंद्रीकरण को कम करके आय एवं संपत्ति की असमानताओं को कम करने में भी अहम भूमिका निभाते हैं। यही नहीं, वे आर्थिक गतिविधियों के विकेंद्रीकरण की मदद से प्रादेशिक असंतुलनों को भी कम करते हैं। ये ग्रामीण उपभोक्ताओं को अपने माल का लाभ प्रदान करके अपनी रूचि के अनुसार अपने विकल्प का उपयोग करने में सहयोग देते हैं।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने ग्रामीण विकास के लिए ग्रामीण जनता के सहयोग से आर्थिक नीतियां बनाने के लिए अनेक सुझाव दिए। उनके सुझावों के अनुरूप कई नीतियां भी बनीं। लेकिन उनके क्रियान्वयन की चूक के चलते उनके अपेक्षित लाभ नहीं मिल पाए। ग्रामीणों के आर्थिक विकास का सबसे सशक्त माध्यम पशुपालन, खेती, लघु–कुटीर उद्योग सहित कृषि से संबंधित मुद्दे रहे। तत्कालीन समय में इन सबसे बढ़कर खादी उद्योग रहा है। वर्तमान में खादी की वास्तविक स्थिति से रूबरू होंगे, तो कड़वी सच्चाई यह है कि कुल कपड़े के उत्पाद का एक प्रतिशत भी खादी नहीं है। जबकि पिछले पांच सालों से भी अधिक समय से इसे लोकप्रिय बनाने के कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

यद्यपि ऐसा नहीं है कि इस दिशा में प्रयास नहीं हुए। आज़ादी के बाद से ही लघु उद्योगों के विकास के लिए अत्यधिक प्रयास किए गए। सन 1948 में देश में कुटीर उद्योग बोर्ड की स्थापना हुई तथा प्रथम पंचवर्षीय योजनाकाल में इनके विकास हेतु 42 करोड़ रुपये की राशि खर्च की गई। फिर 1951, 1977, 1980 एवं 1991 की औद्योगिक नीतियों की घोषणाओं में लघु एवं कुटीर उद्योगों को प्रमुख स्थान दिया गया है। सबके मिले–जुले प्रयासों से लघु उद्योगों की प्रगति तो हुई तथा इससे देश में बेरोजगारी दूर करने तथा अर्थव्यवस्था को सुधारने मे काफी मदद भी मिली है। लेकिन इन उपायों के बावजूद इस क्षेत्र में विकास की रफ्तार को बहुत अधिक तीव्र करने में सफलता नहीं मिल सकी।

साल 1948 से अब तक लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास पर लगातार विशेष जोर दिया जा रहा है। फिर भी लघु एवं कुटीर उद्योगों की सफलता में कहां चूक हुई? स्वतंत्रता संग्राम से ही कुटीर उद्योग खादी व ग्रामीण हस्तशिल्पियों का महत्व समझने के बावजूद स्वतंत्रता के सात दशक से अधिक समय बीतने के बाद भी उन्हें उचित स्थान क्यों नहीं दे पाए हैं? इस ज्वलंत प्रश्न की तह में देखेंगे तो स्थितियों की सच्चाई को समझने के लिए देश के सबसे महत्वपूर्ण कपड़ा उद्योग की स्थिति को जानना होगा। सरकारी आंकडों के अनुसार लगभग 20 प्रतिशत कपड़े का उत्पादन हथकरघा क्षेत्र में होता है, शेष 80 प्रतिशत कपड़े का उत्पादन मिल व पावरलूम क्षेत्र में होता है। जो 20 प्रतिशत उत्पादन हथकरघा क्षेत्र में होता है, उस पर संकट के बादल घिरे रहते हैं। गांधी जी का कहना था कि हथकरघे के लिए सूत की उपलब्धि हाथ की कताई या चरखे से होनी चाहिए। अगर गांधी के इस सुझाव पर अमल किया जाता तो हाथ से बुने कपड़े का उत्पादन एक प्रतिशत से भी कम के स्थान पर 20 प्रतिशत या उससे अधिक हो जाए। इसके बावजूद गांवों में घर–घर में हथकरघा विकास के लिए बहुत अधिक उपाय नहीं किए गए।

दरअसल लघु एवं कुटीर उद्योगों की सबसे बड़ी समस्या कच्चा माल पर्याप्त मात्रा में नहीं मिल पाना है और यदि इन्हें मिलता भी है तो बड़ी परेशानी के बाद ऊंचे मूल्य चुकाने के बाद। इससे इनका लागत मूल्य बढ़ जाता है और वे अपने आर्डर का माल समय पर तैयार नहीं कर पाते। दूसरी प्रमुख बाधा वित्तीय सुविधाओं का अभाव है। लघु उद्योगपतियों की पूंजी सीमित होती है। व्यापारिक दर पर निजी स्रोतों से ऋण लेना पड़ता है। लघु एवं कुटीर उद्योगों की उपयोगिता को बनाए रखने के लिए आज यह अत्यंत आवश्यक है कि उत्पादन तकनीकी का आधुनिकीकरण किया जाए। पुराने औजारों एवं प्राचीन विधियों से लघु एवं कुटीर उद्योग नवीन डिजाइन की उत्तम वस्तुओं का उत्पादन नहीं कर सकते। अतः उनकी निर्माण विधि में आधुनिक यंत्रों का उपयोग करके सस्ती दर पर उत्तम किस्म की वस्तुएं शीघ्रता से उत्पादित की जा सकती हैं। उत्पादित माल के विक्रय के विषय में राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय–स्तर पर विशिष्ट संगठनों की जरूरत है। लघु उद्योगों के साधन इतने सीमित होते हैं कि वे विस्तृत–स्तर पर विज्ञापन व्यवस्थाओं को पूरा नहीं कर सकते हैं। जिन वस्तुओं में आधुनिक मशीनी माल से प्रतियोगिता करनी होती है तब उनके विक्रय की व्यवस्था करना और भी कठिन हो जाता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु एवं कुटीर उद्योगों के महत्व का अनुमान उनकी उपयोगिता से लगाया जा सकता है। रोजगारों का अभाव भारतीय अर्थव्यवस्था के लक्ष्यों को निरंतर प्रभावित करता रहा है। शिक्षित युवाओं के लिए तो रोजगार उपलब्ध कराना सरकार की चुनौती है ही, साथ ही देश के ग्रामीण क्षेत्र में भी इसे दूर करने के लिए सरकार को निरंतर प्रयास करने पड़ रहे हैं। यह सत्य है कि बड़े पैमाने के उद्योग देश में सभी बेरोजगारों को रोजगार नहीं दे सकते। भारतीय कृषि पर जनसंख्या का बोझ पहले से अधिक है जिसे कम किए बिना कृषि उद्योगों में कुशलता नहीं आ सकती है। अतः इतनी विशाल जनसंख्या को काम देने के लिए यह अनिवार्य हो जाता है कि देश में लघु एवं कुटीर उद्योगों का पर्याप्त विकास किया जाए। भारत में औसतन खेतों का आकार इतना छोटा है कि उससे एक किसान परिवार का पालन–पोषण नहीं हो सकता। भारत के कुछ भागों में जहां एक ही फसल होती है वहां कृषकों की दशा और भी खराब है। यदि पशुपालन आदि धंधों का सहारा न मिले तो वह अपना गुजारा भी नहीं कर सकते। अतः कृषि के सहायक धंधों के रूप में लघु एवं कुटीर उद्योगों का विशेष महत्व है। पशुपालन, दुग्ध व्यवसाय, बागवानी, सूत कातना, कपड़ा बुनना, मधुमक्खी पालन आदि ऐसे उद्योग है जो सरलता से कृषि के मुख्य धंधों के साथ–साथ अपनाए जा सकते हैं।

ग्रामीण भारत के समुचित विकास और इन उद्देश्यों को ध्यान में रखकर मौजूदा सरकार ने कई कदम उठाए हैं। किसानों की आमदनी के विस्तार के लिए न केवल खेती को आधुनिक बनाया है बल्कि पशुपालन, बागवानी आदि सहायक उद्योगों पर भी पूरा जोर दिया जा रहा है। इनके अतिरिक्त ग्रामीण–स्तर पर लघु और सूक्ष्म उद्योगों को विकसित करने के निरंतर प्रयास हो रहे हैं। केंद्र सरकार का सूक्ष्म, लघु व मझोले उद्यमों के विकास का काम देखने वाला एमएसएमई मंत्रालय ने बीते चार वर्ष में ऐसी कई नीतियां बनाई हैं जो ग्रामीण भारत में लघु और कुटीर उद्योगों के विकास में सहायक सिद्ध हो रही हैं। नेशनल सैम्पल सर्वे 2015–16 के मुताबिक एमएसएमई क्षेत्र में करीब 633.28 लाख इकाइयां कार्यरत हैं। सर्वे के मुताबिक इन इकाइयों ने 1.10 करोड़ रोजगार सृजित किए हैं।

बीते चार वर्षों में इन उद्योगों की स्थिति में सुधार के लिए सरकार की तरफ से कई कदम उठाए गए हैं। इनमें क्रेडिट की उपलब्धता, प्रौद्योगिकी के उन्नयन के लिए योजनाओं की शुरुआत, गुणवत्ता सुधार और इस क्षेत्र के उत्पादों की मार्केटिंग के लिए सहायता देने जैसे उपाय शामिल हैं। ग्रामीण भारत में लघु व सूक्ष्म

उद्योगों के योगदान को देखते हुए सरकार इन पर भी विशेष ध्यान दे रही है। खादी और ग्रामोद्योग आयोग न केवल देश के विशाल ग्रामीण क्षेत्र द्वारा तैयार वस्तुओं की बुनियादी जरूरतों को पूरा करता है बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 152 लाख लोगों को स्थायी रोजगार भी प्रदान करता है। आयोग ग्रामीण क्षेत्र में स्वरोजगार के जरिए अपने लघु व कुटीर उद्योग चला रहे लोगों के उत्पादों की मार्केटिंग के लिए विशेष प्रयास कर उन्हें देश के शहरी बाजारों तक पहुंचाने में अहम भूमिका निभा रहा है।

यह सर्वविदित है कि ग्रामीण क्षेत्रों में लघु व सूक्ष्म उद्योगों के विकास में पूंजी एक बड़ी अड़चन बनी है। इसे देखते हुए ही मौजूदा सरकार ने इन उद्योगों के लिए ऋण गारंटी न्यास निधि की स्थापना की। सूक्ष्म और लघु उद्योगों की सहायता के लिए सरकार ने साल 2016 में 2500 करोड़ रुपये की समग्र निधि को बढ़ाकर 7500 करोड़ रुपये करने का अनुमोदन किया। इस निधि में पांच हजार करोड़ रुपये की वृद्धि के लिए सरकार ने पूरा अंशदान किया। यही नहीं गैर–बैंकिंग वित्तीय कंपनियों को भी सूक्ष्म व लघु उद्योगों को दिए जा रहे ऋणों के संवितरण के लिए ऋण गारंटी स्कीम के अंतर्गत शामिल किया गया है।

ग्रामीणों द्वारा चलाए जा रहे लघु व सूक्ष्म उद्योगों में उत्पादित सामान की बिक्री सुनिश्चित करने के लिए भी सरकार विभिन्न योजनाएं चला रही है। खादी ग्रामोद्योग कमीशन के अतिरिक्त केंद्र सरकार इन उद्यमों की मदद के लिए बाजार संवर्धन और विकास सहायता के नाम से एक स्कीम भी चला रही है। इस स्कीम के अंतर्गत मूल लागत के 30 प्रतिशत पर वित्तीय सहायता उपलब्ध करायी जाती है। यह मदद उत्पादक संस्थाओं को चालीस प्रतिशत, विक्रेता संस्थाओं को 20 प्रतिशत और कारीगरों के बीच 40 प्रतिशत तक वितरित की जाती है। विपणन सहायता स्कीम के तहत उन उद्यमों को अपने उत्पादों को प्रदर्शित करने और बाजार में सब्सिडी दरों पर विभिन्न घरेलू और अंतरराष्ट्रीय प्रदर्शनियों व व्यापार मेलों में भाग लेने के लिए सहायता प्रदान की जाती है। साल 2014 से लेकर 2018 तक की अवधि में 53.16 करोड़ रुपये की राशि वितरित की गई है। सरकार के इन प्रयासों को नतीजा है कि इस अवधि में 848 प्रदर्शनों में भाग लेने के लिए लगभग 22337 उद्यमियों की मदद की गई।

इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम ने इन इकाइयों की वित्तीय मदद को ध्यान में रखते हुए वित्त सुविधा केंद्रों (एफएफसी) की स्थापना की है। इन केंद्रों से लघु व सूक्ष्म उद्यमी बैंकों से ऋण प्राप्त कर सकते हैं। वर्तमान में जालंधर, गुवाहाटी, लुधियाना, हैदराबाद, जयपुर, चेन्नई और कानपुर में में ये केंद्र चल रहे हैं। इस वर्ष 31 मार्च तक इन केंद्रों से 421.59 करोड़ रुपये के 133 प्रस्ताव तैयार किए जा चुके हैं। एफएफसी पोर्टल पर विभिन्न बैंकों के पास 210.57 करोड़ रुपये मूल्य के 46 प्रस्ताव विचाराधीन हैं। जबकि 42.20 करोड़ रुपये मूल्य के 52 प्रस्ताव स्वीकृत किए जा चुके हैं।

सरकार निरंतर आर्थिक विकास की गति को तेज करने के उपाय कर रही है। लेकिन इसमें दो राय नहीं है कि जब तक देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था की सतत् रफ्तार का लक्ष्य प्राप्त नहीं हो जाता तब तक इस लक्ष्य को पाना संभव नही है। चालू वित्त वर्ष की पहली तिमाही में कृषि क्षेत्र की विकास दर उल्लेखनीय रही है। लेकिन एक वर्ष की किसी एक तिमाही में कृषि व अन्य सहायक उद्योगों की तेज विकास दर पूरे वर्ष की आर्थिक विकास का संबल नहीं बन सकती। इसलिए यह आवश्यक है कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था का पूरा बोझ केवल कृषि व उससे जुड़े उद्योगों पर न रहें, बल्कि इस क्षेत्र में लघु व सूक्ष्म अथवा कुटीर उद्योगों के विकास की नीति पर बल दिया जाए। ग्रामीण युवाओं को न केवल स्वरोजगार के माध्यम से विभिन्न उद्यमों की स्थापना के लिए प्रेरित किया जाए बल्कि वहां उसके अनुकूल पूरा ढांचा तैयार किया जाए ताकि उनकी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति स्थानीय स्तर पर ही हो जाए। इससे न केवल ग्रामीण अर्थव्यवस्था मजबूत होगी बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों से होने वाले अनावश्यक पलायन को भी रोका जा सकेगा।

(लेखक दैनिक जागरण के दिल्ली स्थित राष्ट्रीय ब्यूरो में ब्यूरो प्रमुख हैं।)

ई–मेल : pradhannitin@gmail.com